होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम

शिक्षक निर्देशिका

यह निर्देशिका परीक्षण, टिप्पणी व संशोधन के लिये होशंगाबाद जिले के शिक्षकों को प्रस्तुत की जा रही है

जन्तुओं का जीवन चक्र

बाल वैज्ञानिक
कक्षा आठ (खंड एक)

जुलाई, 1982

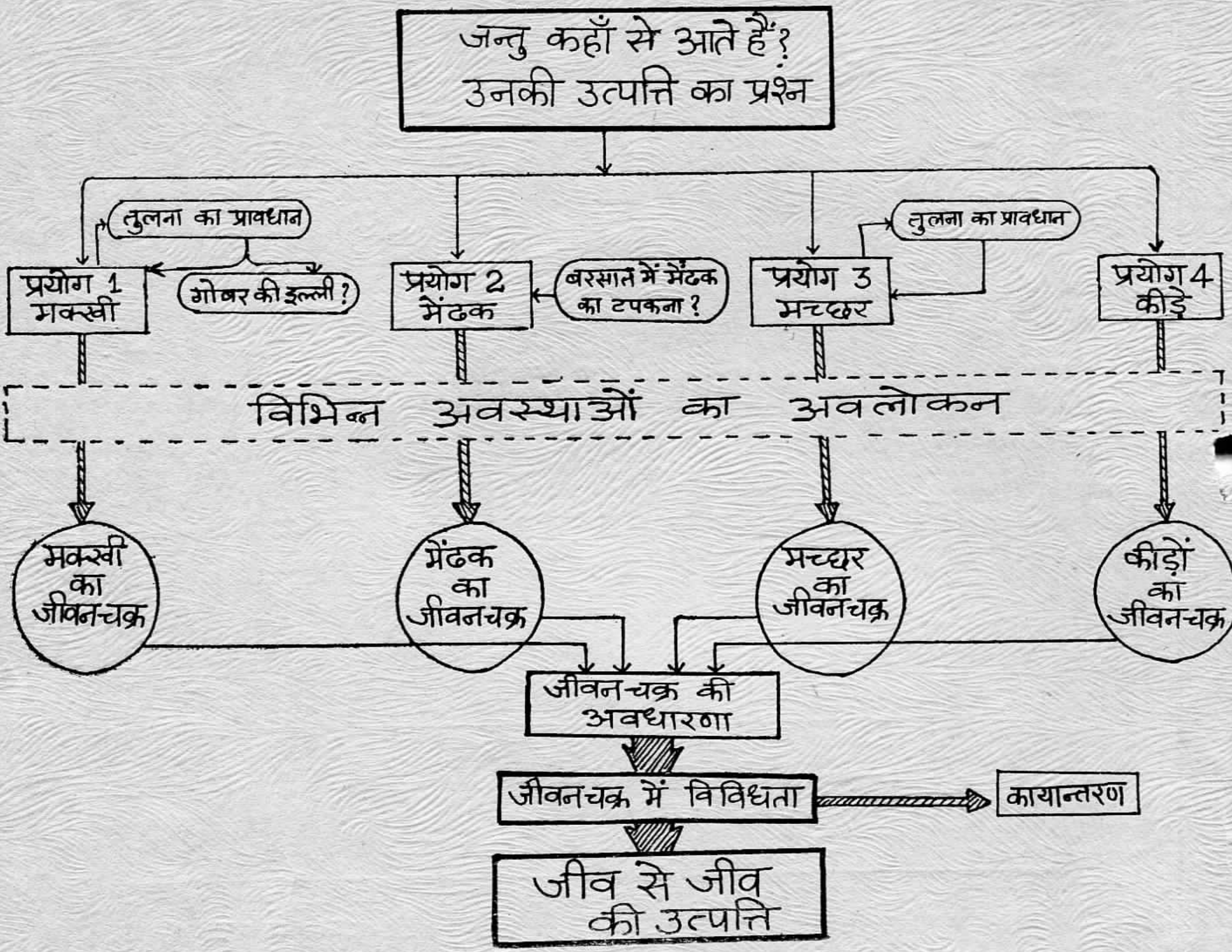
जन्तु कहाँ से आते हैं?
उनकी उत्पत्ति का प्रश्न
तुलना का प्रावधान
प्रयोग 1 मक्खी
गोबर की इल्ली?
प्रयोग 2 मेंढक
बरसात में मेंढक का टपकना?
प्रयोग 3 मच्छर
तुलना का प्रावधान
प्रयोग 4 कीड़े
विभिन्न अवस्थाओं का अवलोकन
मक्खी का जीवनचक्र
मेंढक का जीवनचक्र
मच्छर का जीवनचक्र
कीड़ों का जीवनचक्र
जीवन-चक्र की अवधारणा
जीवनचक्र में विविधता
कायान्तरण
जीव से जीव की उत्पत्ति

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

जीवों की उत्पत्ति के बारे में समाज में सदियों से भ्रांतिपूर्ण धारणाएं व्याप्त रही हैं। गोबर से इल्ली पैदा होना, वर्षा के साथ मेंढक या मछलियां बरसना या मिट्टी में से बीर-बहूटी (गोकुल गाय) पैदा होना जैसे कथनों में इस भ्रांति की झलक मिलती है। पौराणिक काल से ही हमारे देश में उत्पत्ति के आधार पर जीवों को चार श्रेणियों में बांटा गया है —अंडज, पिंडज, स्वेदज एवं उद्भिज। स्वेदज (पसीने से पैदा होने वाले) और उद्भिज (मिट्टी से पैदा होने वाले) जैसी श्रेणियों के पीछे स्पष्ट मान्यता रही होगी कि जीवों की उत्पत्ति बिना जीवों के यानी निर्जीव पदार्थों से ही हो सकती है। इस तरह की मान्यता ने पूरे यूरोप के चिन्तन को १६ वीं शताब्दी तक जकड़ रखा था। अरस्तू (ईसा से पूर्व ३८४-३२२) ने तालाब के कीचड़ में से मछलियों के पैदा होने और पत्तियों पर गिरी ओस या जानवरों के बाल या गोश्त में से कीड़े पैदा होने के अपने अवलोकनों के बारे में लिखा था। ये विश्वास अवश्य लापरवाही से किये गये अवलोकनों के परिणाम रहे होंगे, परन्तु इनका यूरोप के वैज्ञानिक विकास पर व्यापक प्रभाव पड़ा। इन्हीं विश्वासों के आधार पर स्वतः-जनन (अपने-आप पैदा होना) की अवधारणा विकसित हुई।

स्वतः-जनन की अवधारणा को सबसे पहले इटली के वैज्ञानिक फ्रांसेस्को रेडी (१६२६-६७) ने चुनौती दी। उन दिनों आम अवलोकन था कि बासी और सड़ते हुए गोश्त में कीड़े पड़ जाते थे। १७ वीं शताब्दी के अधिकांश जीवशास्त्रियों का मत था कि ये कीड़े स्वतः-जनन की प्रक्रिया से गोश्त में से ही पैदा होते हैं। रेडी को संदेह था कि ये कीड़े वास्तव में उन मक्खियों से संबंधित हैं, जो बासी गोश्त के इर्द-गिर्द भनभनाती रहती हैं। अतः उसने एक सरल प्रयोग किया। इस प्रयोग में उसने चार बोतलें लीं जिनमें अलग-अलग जन्तु मारकर रख दिये और उन्हें ऐसे ही खुला छोड़ दिया। फिर उसने चार और वैसी ही बोतलें तैयार कीं पर उन्हें बन्द कर दिया ताकि उनके अन्दर मक्खियां न जा सकें। रेडी ने देखा कि कुछ ही दिनों में खुली बोतलों में रखे मांस पर ढेर सारे कीड़े पैदा हो गये पर जिन बोतलों को बन्द रखा था उनमें कीड़े नहीं दिखे। इस प्रयोग से रेडी ने निष्कर्ष निकाला कि मांस में से कीड़े स्वतः पैदा नहीं हो सकते। इनके पैदा होने के लिये आवश्यक है कि मक्खी मांस पर अंडे दे जिनमें से कीड़े (इन्हें अब हम इल्ली या लार्वा कहते हैं) निकलेंगे। रेडी के इस निष्कर्ष को स्वीकारने में कई वर्ष लग गये क्योंकि यूरोप के पूरे समाज पर अरस्तू की पुस्तकों का आधिपत्य था।

स्वतः-जनन का प्रश्न १८ वीं शताब्दी में एक नये रूप में फिर से उभरा। एंथनी वान ल्यूवन हुक (१६३२-१७२३) हालेंड का निवासी था जिसने सूक्ष्मदर्शी का आविष्कार किया। उसने अपने द्वारा बनाए सूक्ष्मदर्शी से गंदे पानी की बूंद में अनेक छोटे-छोटे जीव-जन्तु देखे और इस प्रकार उसने सूक्ष्म जीवियों की एक निराली दुनिया का झरोखा खोलकर जीव-शास्त्र को एक नया आयाम दे दिया। सूक्ष्मदर्शी का आविष्कार होने के पहले लोग यह मानने लग गये थे कि कीड़े, मछली व चूहे जैसे बड़े जन्तु स्वतः-जनन से पैदा नहीं होते, वरन् वे अपने पूर्वजों से ही पैदा होते हैं। परन्तु अब वैज्ञानिकों ने एक बार फिर सवाल उठाया कि क्या ये सूक्ष्मजीव स्वतः-जनन से पैदा हो सकते हैं। आखिर कई लोगों ने यह अवलोकन कर लिया था कि यदि थोड़ा-सा घास-फूस या कुछ बीजों के टुकड़े काटकर साफ पानी में रख दिये जाये तो कुछ दिनों बाद पानी में असंख्य सूक्ष्म जीव पैदा हो जाते हैं। ये सूक्ष्म जीव अवश्य ही सड़ते हुए पदार्थों में से पैदा होते होंगे, ऐसा मत कई वैज्ञानिकों का बनने लगा था। परन्तु कुछ वैज्ञानिकों ने मतभेद प्रकट करते हुए तर्क दिया कि ये सूक्ष्म जीव या इनके बीजाणु (जिनसे सूक्ष्म जीव पैदा होते हैं) हवा में रहते हैं और जब हवा का सम्पर्क सड़ते हुए पदार्थों से होता है तो ये जीव पनपने लगते हैं।

एक भयंकर बहस छिड़ गई। इस बहस के दो पक्ष थे। एक पक्ष स्वतः-जनन में विश्वास करने वालों का था। दूसरा पक्ष जैविक जनन में विश्वास करने वालों का था जिनके अनुसार जीव अपने-आप पैदा नहीं होते वरन् वे अपने जैसे पूर्वजों से ही पैदा होते हैं, यानी जीवों की उत्पत्ति अन्य जीवों से ही होती है। इस विवाद का हल करने के लिये प्रायोगिक प्रमाण आवश्यक था, केवल बहस करने से हल नहीं निकलने वाला था। अतः सन् १७११ में लुई जाब्लो नामक वैज्ञानिक ने एक प्रयोग किया जिसमें उसने थोड़ा-सा घास-फूस पानी में उबालकर अर्क तैयार किया। इस अर्क को उसने दो बर्तनों में आधा-आधा करके रख दिया। एक बर्तन खुला छोड़ दिया गया और दूसरे बर्तन का मुंह कस-कर बंद कर दिया गया। कुछ दिन बाद यह पाया गया कि खुले बर्तन में असंख्य सूक्ष्म जीव तैर रहे थे जबकि बंद बर्तन का अर्क बिलकुल साफ था। जाब्लो ने तर्क किया कि यदि सूक्ष्म जीव घास-फूस के अर्क में से पैदा होते तो दोनों बर्तनों में सूक्ष्म जीव मिलने चाहिये थे। क्योंकि ऐसा नहीं हुआ, अतः सूक्ष्म जीव या उनके बीजाणु हवा से ही आये होंगे। जरा सोचिये कि यदि जाब्लो अपने प्रयोग में केवल बंद मुंह वाला बर्तन ही रखता तो क्या यह निष्कर्ष निकालना संभव होता। तुलना के प्रावधान का महत्व इस प्रकार लगभग ढाई सौ साल पहले स्थापित हो चला था।

जाब्लो के प्रयोग से स्वतः-जनन में विश्वास करने वाले लोग आश्वस्त नहीं हुए। उनका तर्क था, कि स्वतः-जनन के लिये हवा जरूरी है। क्योंकि जाब्लो ने बर्तन को कसकर बंद कर दिया था, अतः अर्क में सूक्ष्म-जीवियों के पनपने के लिये अनुकूल परिस्थितियां ही नहीं थीं। इसक विपरीत जैविक जनन के पक्षधारियों का कहना था कि हवा में सूक्ष्म-जीवियों के बीजाणु होते हैं अतः प्रयोगों में से हवा को हटाना या उस पर नियंत्रण रखना आवश्यक था। यह एक अजीबोगरीब समस्या थी। स्वतः-जनन के पक्षधारियों के अनुसार उनके मत की पुष्टि के लिए हवा जरूरी थी और जैविक जनन वालों के अनुसार स्वतः-जनन की धारणा को तोड़ने के लिये प्रयोगों में बिना हवा वाली परिस्थितियां बनाना जरूरी था।

इस विवाद का प्रामाणिक हल प्रसिद्ध फ्रांसीसी वैज्ञानिक लुई पास्चर (१८२२-९५) के प्रयोगों से हुआ। पास्चर ने यीस्ट (खमीर) नामक एक फफूंद को उबालकर उसका अर्क बनाया और उसमें शक्कर मिला दी। इस उबले हुए अर्क को जब हवा में खुला छोड़ दिया जाता था तब उसमें असंख्य बैक्टीरिया और अन्य सूक्ष्म जीव पैदा हो जाते थे, परन्तु जब इसी अर्क को बंद रखा जाता था तब इसमें कोई सूक्ष्म जीव नहीं मिलते थे। परन्तु यह प्रयोग विवाद का हल करने के लिये काफी नहीं था। अतः पास्चर ने एक नया प्रयोग सोचा जिसमें उसने खमीर-अर्क और शक्कर के मिश्रण को कांच की चार गोल फ्लास्कों में रख दिया। फिर उसने फ्लास्कों की गर्दन को गर्म करके हंस की गर्दन या अंग्रेजी के "S" अक्षर की आकृति में खींच दिया। इन फ्लास्कों में उसन अर्क को उबाला और गर्म भाप लंबी गर्दन में से गुजरने दी। भाप की गर्मी से गर्दन में लगे हुए सूक्ष्मजीव और उनके बीजाणु मर गये। इन फ्लास्कों को पास्चर ने खुला छोड़ दिया। पास्चर का मत था कि जब हवा लंबी गर्दन में से गुजरेगी तो उसमें उपस्थित बीजाणु कांच की दीवार पर बैठ जायेंगे और अर्क तक नहीं पहुंचेंगे। प्रयोग में देखा गया कि एक भी फ्लास्क में सूक्ष्म जीव नहीं उगे। इस प्रयोग से सिद्ध हुआ कि यदि हवा में से बीजाणु निकाल लेने की व्यवस्था कर ली जाये तो इसके सम्पर्क के बावजूद अर्क में कुछ नहीं उगता, यानी स्वतः-जनन नहीं होता।

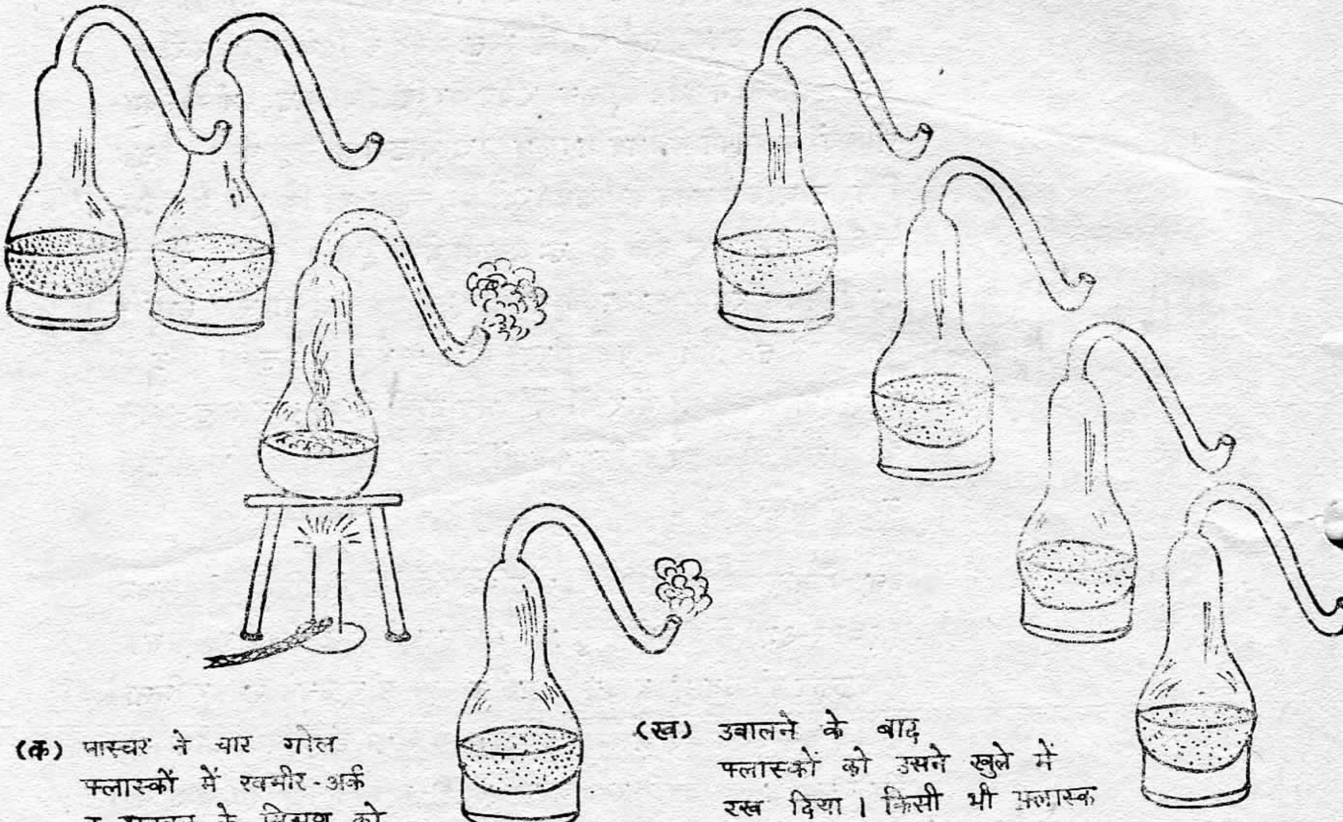

(क) पास्चर ने चार गोल फ्लास्कों में खमीर-अर्क व शक्कर के मिश्रण को रखकर उनकी गर्दनों को हंस की गर्दन की आकृति में मोड़ दिया। फिर उसने उन्हें अच्छी तरह उबाला।

(ख) उबालने के बाद फ्लास्कों को उसने खुले में रख दिया। किसी भी फ्लास्क में सूक्ष्मजीव नहीं उगे, हालांकि उनमें हवा आ-जा रही थी। हवा में उपस्थित बीजाणु गर्दनों की दीवार पर बैठ जाते होंगे और अर्क तक नहीं पहुँच पाते होंगे।

पास्चर का प्रयोग

पास्चर के प्रतिभाशाली प्रयोगों के बाद १७ वीं शताब्दी से चला आ रहा विवाद लगभग खत्म हो गया। आज स्वतः-जनन की अवधारणा पर शायद ही कोई जीवशास्त्री विश्वास करता हो। इस मत को अब व्यापक मान्यता मिल गई है कि जीव की उत्पत्ति जीव से ही होती है। परन्तु क्या रेडी से लेकर पास्चर तक के वैज्ञानिकों के प्रयोगों से यह प्रमाणित हो गया है कि स्वतः-जनन असम्भव है? गहराई से सोचने पर समझ में आता है कि इन सभी प्रयोगों से मुख्यतः दो प्रमुख निष्कर्ष निकलते हैं :—

१. स्वतः-जनन के जितने उदाहरण पेश किये गये थे वे सब गलत सिद्ध हुए।

२. अभी तक किसी भी प्रयोग में स्वतः-जनन का प्रमाण नहीं मिला है। दूसरे शब्दों में, यह सिद्ध नहीं हुआ है कि किसी भी परिस्थिति में स्वतः-जनन संभव नहीं है (खोज करने पर शायद अनुकूल परिस्थिति मिल जाये)।

यदि यह मान लिया जाये कि जीव की उत्पत्ति जीव से ही होती है, तो क्या इसका यह अर्थ है कि पृथ्वी पर हमेशा जीवन था। हमें पता है कि एक ऐसा समय था जब पृथ्वी पर जीवन नहीं था। तो फिर पहली बार जीवन कहां से आया? यह दार्शनिक स्तर का प्रश्न है। संकेत है कि पहली बार जीवन की उत्पत्ति स्वतः-जनन से ही हुई होगी, पर उसकी परिस्थितियां वे नहीं हो सकतीं जिनकी बात हम उक्त प्रयोगों में कर रहे थे।

इस लंबे और सारे विवाद की व्यावहारिक जीवन में उपयोगिता क्या है? उदाहरण के लिये टी.बी. के मरीज का मामला लीजिये। यदि बैक्टीरिया स्वतः-जनन से पैदा हो सकते हैं तो डाक्टर का काम इस मरीज के अन्दर उपस्थित बैक्टीरिया पर नियंत्रण पाना मात्र रह जाता है। परन्तु हम जानते हैं कि नया बैक्टीरिया अन्य सजीव बैक्टीरिया से ही पैदा होगा, अतः टी.बी. का रोग केवल किसी अन्य रोगी से ही लग सकता है। छूत की बीमारियों की रोकथाम इसी समझ पर आधारित है कि सभी जीव अन्य जीवों से ही पैदा होते हैं।

जीवनचक्र.

कई जीवों का जीवनचक्र अंडों से शुरू होता है। अंडों से छोटे-छोटे बच्चे निकलते हैं और बड़े होकर प्रजनन करके वे फिर से नये अंडे पैदा करते हैं। मक्खी के अंडे से इल्ली और इल्ली से शंखी बनती है। शंखी से फिर एक मक्खी बन जाती है। उक्त दो उदाहरणों से यह बात स्पष्ट होती है कि जीवों में एक जीवनचक्र सा चलता रहता है।

किसी वयस्क जीव से शुरू करके उससे बनने वाली विभिन्न अवस्थाओं को क्रम से जोड़ते हुए फिर एक वयस्क जीव तक पहुंचने पर जो चक्र बनता है उसे जीवनचक्र कहते हैं।

उद्देश्य.

इस अध्याय के दो प्रमुख उद्देश्य हैं :—

(क) कुछ चुने हुए जन्तुओं के जीवनचक्रों का अध्ययन करके उनकी विविधता को पहचानना।

(ख) इस प्रश्न का उत्तर खोजना कि जीव जीव से ही पैदा होता है या अपने-आप भी।

समांतर प्रयोगों की व्यवस्था

इस अध्याय के सभी प्रयोग लंबी अवधि के हैं। अतः इनके साथ सुविधानुसार अन्य अध्यायों के प्रयोग भी किये जाएं। उदाहरण-स्वरूप, 'सूक्ष्मदर्शी' में से जीव-जगत, 'फूल और फल', 'पौधों में प्रजनन, आदि इस दृष्टि से ठीक हैं क्योंकि इन अध्यायों के लिए भी सामान्यतः वर्षा का ही मौसम उपयुक्त है। अम्ल, क्षार और लवण भी इसी मौसम में करना सुविधाजनक रहेगा क्योंकि इसके लिये आसुत जल (वर्षा का पानी) की आवश्यकता होती है। ऐसे अन्य अध्यायों या उनके प्रयोगों को चुनते हुए कुछ विशेष बातों का ध्यान रखना उपयोगी होगा। उदाहरणार्थ, मेंढक के अंडे इकट्ठे करते हुए 'सूक्ष्मदर्शी में से जीव-जगत' अध्याय के लिए डबरों का गंदा पानी और काई इत्यादि भी इकट्ठे किये जा सकते हैं। इसी प्रकार 'पौधों में प्रजनन' के प्रयोग क्र. १ व २ भी शुरू करना उचित होगा क्योंकि जीवनचक्रों की अवधि पूरी होते-होते ये प्रयोग भी पूरे हो जायेंगे। इस प्रकार सोच-समझकर काम की योजना बनाने से मूल्यवान समय की बचत की जा सकती है।

दैनिक अवलोकन की व्यवस्था.

इस अध्याय के सभी प्रयोगों में विद्यार्थियों को प्रतिदिन लगभग १०-१५ मिनट का समय देकर अपने प्रयोगों की देखरेख करनी होगी और अवलोकन लेने होंगे। बीच-बीच में चित्र भी बनाने होंगे। जिस दिन विज्ञान का पीरियड नहीं है उस दिन इस काम के लिये विद्यार्थियों को समय देने की विशेष व्यवस्था की जाये। इस सम्बंध में एक जरूरी बात यह है कि देखरेख करने और अवलोकन लेने की व्यवस्था इस प्रकार की जाये कि इनके लिए प्रत्येक २४ घंटे के बाद समय अवश्य मिले। यह इसलिये महत्वपूर्ण है कि जीवनचक्र की अवस्थाओं में परिवर्तन तेजी से होता है और कुछ घंटों के अंतर से भी अवलोकनों पर पर्याप्त प्रभाव पड़ सकता है।

अध्याय कब करें ?

इस अध्याय को कराने का सबसे उपयुक्त समय जुलाई के प्रथम सप्ताह से मध्य सितम्बर तक का है क्योंकि इसी समय मक्खी, मच्छर, मेंढक व कई अन्य कीड़ों का प्रजनन काल होता है। शिक्षकों का अनुभव है कि सत्र की शुरुआत इस अध्याय के प्रयोग क्र. १, २ व ३ से की जाये तो उचित रहता है। ये तीनों प्रयोग एक साथ शुरू किये जा सकते हैं।

प्रदर्शनी की तैयारी.

जीवनचक्र की विभिन्न अवस्थाएं रक्षक घोल में प्रदर्शन के लिए सुरक्षित रखी जा सकती हैं। इसके लिए इंजेक्शन की शीशियां उपयोग हो सकती हैं। ऐसे प्रदर्शन से तुलनात्मक अध्ययन में मदद मिलेगी।

फिट सूची.

किट सामग्री			स्थानीय परिवेश/घर से प्राप्त सामग्री		
क्र.	नाम	टोली-वार संख्या	क्र.	नाम	टोली-वार संख्या
१	धागा/रबर के छल्ले	४	१	कुल्हड़/टीन के डिब्बे/नारियल की नटी/दोना	२
२	आलपिन/सुई	१	२	ताजा गोबर	*
३	हेंडलेन्स	१	३	कापी का कागज	४
४	सूक्ष्मदर्शी	१/५	४	मटके का पेंदा/नगाडी	१

*आवश्यकतानुसार।

किट सामग्री			स्थानीय परिवेश घर से प्राप्त सामग्री		
५	बीकर/प्लास्टिक की बनी	१	५	टिपुआ बनाने की सामग्री	*
६	ड्रापर	१	६	इंजेक्शन की शीशियां	४
७	कोनिकल फ्लास्क	१			
८	रुई/छन्ना कागज	*			
९	रक्षक घोल	*			

* आवश्यकतानुसार,

प्रयोग १

इस प्रयोग को शुरू करते हुए शायद विद्यार्थी यह जानना चाहें कि ताजा गोबर ही लेना क्यों जरूरी है, बासी गोबर से काम क्यों नहीं चल सकता। यहां पर इतना ही स्पष्ट करना काफी होगा कि ताजे गोबर का मक्खी से कोई सम्पर्क नहीं होने के कारण उसे 'क' और 'ख' दो भागों में बांटा जा सकता है जिसमें 'क' का मक्खी से कोई सम्पर्क नहीं होने दिया जाता और 'ख' पर जानबूझकर मक्खियां बैठने का मौका दिया जाता है। इस क्रिया का महत्व प्रयोग के बाद तब स्पष्ट हो जायेगा जब कक्षा में (१८) से (२३) तक के प्रश्नों पर चर्चा होगी।

कई शिक्षकों से यह सुनने को मिला है कि हर कक्षा में एक-दो टोलियां ऐसी भी होती हैं जिनके 'ख' डिब्बे में मक्खी की कोई भी अवस्था देखने को नहीं मिलती। ऐसा होने का प्रमुख कारण यह है कि गोबर पर मक्खियां बैठीं तो जरूर होंगी, परन्तु उन्हें अंडे देने का मौका नहीं मिला होगा। अतः प्रयोग को सफल बनाने के लिये आवश्यक है कि विद्यार्थी 'ख' डिब्बे को खुला छोड़कर उस पर नजर रखें और गोबर पर बैठी हुई मक्खी के पिछले हिस्से से अंडे निकलते हुए देखने पर ही 'ख' डिब्बे को बंद करें। यदि 'ख' डिब्बे के नजदीक मक्खियां न आ रही हों तो डिब्बे के नजदीक थोड़ा-सा गुड़ बिखेर देने से मदद मिलेगी। मक्खियां बैठाने की सम्भाविता बढ़ाने के अन्य तरीके विद्यार्थी स्वयम् बतायेंगे।

वर्षा के दिनों में कई बार गोबर की सतह पर सफेद फफूंद दिखेगी। ऐसा बंद रखे हुए 'क' डिब्बे में भी दिख सकता है। हो सकता है कि बच्चे जानना चाहें कि बंद डिब्बे में फफूंद कहां से आई। कहीं यह गोबर से तो अपने-आप पैदा नहीं हो गई? इस भ्रम को दूर करना जरूरी होगा। फफूंद के असंख्य सूक्ष्म बीजाणु हवा में फैले रहते हैं, जो नमी और उचित ताप पाकर गोबर पर फफूंद के रूप में विकसित हो जाते हैं।

इस प्रयोग के दौरान कई बार अंडे, इल्ली इत्यादि को उठाकर इधर-उधर रखना होगा। इस काम को बहुत सावधानीपूर्वक करने की जुरूरत है, अन्यथा इन अवस्थाओं को नुकसान पहुंच सकता है। यदि संभव हो तो कागज के टुकड़े या पत्ती की नोक की मदद स इन्हें उठाया जा सकता है। यदि गोबर के अन्दर से खोदकर इल्ली या शंखी को निकालना हो तो माचिस की तीली या नरम टहनी का उपयोग ठीक रहेगा।

शंखी से मक्खी बनने के दौरान प्रायः यह देखा गया है कि उसे देखने के लिये जब विद्यार्थी कागज हटाते हैं तब वह उड़ जाती है। इसलिये विद्यार्थी उस अवलोकन से वंचित रह जाते हैं। इसके लिये सुझाव है कि यदि कागज की जगह पोलीथीन में बारीक छेद करके उससे प्रयोग वाले बर्तन का मुंह बंद किया जाये तो शंखी से बनने वाली मक्खी ऊपर से ही दिख जाएगी।

तुलना का प्रावधान क्यों?

विभिन्न प्रयोगों में या किसी घटना के घटने मे जब एक से अधिक कारकों (या परिस्थितियों) का प्रभाव पड़ता है तब यह जानने के लिये कि किस कारक का क्या प्रभाव होगा, हम प्रयोगों के दो सेट तैयार करते हैं। इन दोनों सेटों में सिर्फ उस कारक (या परिस्थिति) को छोड़कर जिसके प्रभाव का अध्ययन करना है, अन्य सभी परिस्थितियां समान

रखी जाती हैं। इस तुलनात्मक प्रयोग से हमें उस कारक (या परिस्थिति) विशेष के प्रभाव का पता लग जायेगा।

मक्खी वाले प्रयोग में इसी सिद्धान्त पर दो सेट 'क' और 'ख' रखे गये हैं। इन दोनों डिब्बों में सभी परिस्थितियां एक समान हैं, सिवाय इसके कि 'ख' डिब्बे के गोबर से मक्खी का सम्पर्क हुआ है और 'क' डिब्बे के गोबर से नहीं। अतः 'क' और 'ख' डिब्बों के अवलोकनों में जो भी अंतर आयेगा वह सिर्फ मक्खी के सम्पर्क के कारण ही आयेगा।

तुलना के प्रावधान की बात को स्पष्ट करने के लिये आप विद्यार्थियों से निम्नलिखित सहायक प्रश्न पूछ सकते है :—

"एक विद्यार्थी ने मक्खी वाले प्रयोग में 'ख' डिब्बे को जब-जब खोला तब उसमें थोड़ासा पानी डाल दिया, परन्तु 'क' डिब्बे में कभी भी पानी नहीं डाला। इससे निष्कर्ष निकालने में क्या दिक्कत आयेगी ?

यदि तुलना के प्रावधान की अवधारणा बच्चों को समझ आ गई होगी तो उनको उत्तर निम्न प्रकार का होगा—

अब 'क' और 'ख' डिब्बों में दो अंतर हो गये हैं। एक तो 'ख' डिब्बे के गोबर पर मक्खी बैठने के कारण हुआ है और दूसरा उसी में रोज पानी डालने के कारण। अतः यह नहीं कहा जा सकता कि 'ख' में अंडे, इल्ली या शंखी का मिलना इन दो कारणों में से किस कारण से है। हो सकता है कि अतिरिक्त पानी मिलने के कारण ये अवस्थाएं पैदा हो गई हों। यदि 'क' में भी रोज पानी डाला जाता तो उसमें भी शायद इल्ली पैदा हो जाती।"

ऐसा उत्तर मिलने पर आप एक और प्रश्न पूछ सकते हैं :—

"इस गड़बड़ को सुधारने के लिये क्या किया जा सकता था?"

प्रश्न (१८) से (२३) तक के प्रश्नों की चर्चा से स्पष्ट हो गया होगा कि यदि 'क' डिब्बे को प्रयोग में शामिल नहीं किया जाता तो यह निष्कर्ष निकालना सम्भव नहीं होता कि "मक्खी गोबर में से अपने-आप पैदा नहीं होती।" पिछली कक्षाओं के विभिन्न प्रयोगों के संदर्भ में प्रश्न (२५) के चौथे भाग में भी विद्यार्थियों से इसी प्रकार के तर्क की अपेक्षा की गई है।

ठीक यही बात कक्षा छः के भोजन और पाचन-क्रिया अध्याय के खंड पांच के प्रयोग क्र. ५ पर भी लागू होती है। यदि सादे पानी वाला बीकर प्रयोग में नहीं रखा जाता तो कोई यह कह सकता था कि पत्तियों और टहनियों का रंगीन हो जाना पानी के चढ़ने के कारण नहीं, वरन् अन्य किसी कारण से है (जैसे, टहनी को काट दिये जाने के कारण)। परन्तु ऐसा तर्क तुलना का प्रावधान (सादे पानी वाला बीकर) रखने के कारण नहीं दिया जा सकता क्योंकि इसकी टहनी और पत्तियां रंगीन नहीं होतीं। अतः इस प्रयोग से स्पष्ट निष्कर्ष निकालना सम्भव है कि टहनी और पत्तियों का रंगीन होना उनमें रंगीन पानी ऊपर चढ़ाने के कारण है।

कक्षा छह और सात की कापियों को देखकर तुलना के प्रावधान वाले प्रयोगों की सूची बनवाने और उनका विवेचन करवाने से विद्यार्थियों को दो महत्वपूर्ण लाभ होंगे :—

(क) विद्यार्थियों को कई प्रयोगों के संदर्भ में तुलना के प्रावधान की भूमिका समझ में आने से इस वैज्ञानिक प्रक्रिया का सामान्य महत्व समझ में आ जायेगा। यह अपेक्षा की जाती है कि ऐसी समझ विकसित होने से जब विद्यार्थी नये प्रयोगों की योजना बनायेंगे तो उनमें तुलना के प्रावधान की व्यवस्था स्वयम् सोच सकेंगे।

(ख) पिछली कक्षाओं की कापियों को समय-समय पर देखने और उनमें से अपने काम की बातें ढूंढ़ने की प्रक्रिया का शैक्षिक महत्व है। ऐसा करते रहने से पूरे पाठ्यक्रम की एक समग्र समझ विकसित होने में मदद मिलेगी।

मेंढक का जीवनचक्र
प्रयोग २

अंडे कब इकट्ठ करें ?

पहली वर्षा के लगभग एक सप्ताह के बाद आसपास के डबरों या पोखरों में अंडों के समूह ढूंढ़िये। यह वही समय है जब आपको मेंढक की टर्र-टां टर्र-टां की आवाज सुनाई देती है। अंडे इकट्ठे करने के लिए सबसे उपयुक्त समय जुलाई के प्रथम दो सप्ताहों का है। यदि किसी कारण प्रयोग शुरू करने में देरी हो जाये या प्रयोग असफल हो जाये तो कोशिश कीजिये कि मध्य अगस्त के पहले ही प्रयोग शुरू कर दिया जाये, अन्यथा अंडों का मिलना मुश्किल हो जायेगा।

अंडों की पहचान

मेंढक के अंडों की सही पहचान करना बहुत जरूरी है क्योंकि डबरों में

मछलियों और कीड़ों के अंडे भी अंड-समूह के रूप में पाये जाते हैं और उनमें भ्रम हो सकता है।

मेंढक के अंड-समूह पहचानने के लिये निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखिये :—

(क) मेंढक के अंडे गोल, पारदर्शी और चमकीली सतह वाले होते हैं। ऐसे बहुत सारे अंडे एक-दूसरे से सटे हुए एक लसलसे जेली-समान पारदर्शी पदार्थ से घिरे हुए रहते हैं। ये अंड-समूह चकतों के रूप में साधारणतः डबरों के किनारे पानी की सतह पर उतराते हुए या जलीय पौधों से लटके हुए पाये जाते हैं।

(ख) मछलियों या कीड़ों के अंड-समूहों की जेली मेंढक के अंड-समूह की जेली की तुलना में अधिक पारदर्शी और पतली होती है।

प्रयोग की सफलता की सम्भाविता बढ़ाने के लिये विद्यार्थियों को एक से अधिक अंड-समूह इकट्ठा करने के निर्देश दें। अच्छा होगा यदि एक बर्तन में केवल एक अंड-समूह ही रखा जाये, भीड़ न की जाये।

मैथुन क्रिया और निषेचन

मेंढक के जो अंडे विद्यार्थी इकट्ठे करेंगे वे वास्तव में निषेचित अंडे होंगे और उनमें से प्रत्येक से एक-एक टैडपोल बनेगा। इन अंडों के बनने, मैथुन क्रिया और इनके निषेचन इत्यादि को लेकर बच्चे अक्सर प्रश्न पूछते हैं। अतः आपको इस विषय पर कुछ अतिरिक्त जानकारी दी जा रही है जिसका उपयोग आप आवश्यकतानुसार कर सकते हैं।

वर्षा ऋतु के शुरू में आपको मेंढक की जो टर्र-टां टर्र-टां की आवाज सुनाई पड़ती है वह वास्तव में नर मेंढक द्वारा मादा मेंढकों को मैथुन क्रिया के लिये आकर्षित करने के लिये होती है। मादा के निकट आने पर नर मेंढक मादा की पीठ पर चढ़कर अपनी अगली टांगों से मादा को कसकर पकड़ लेते हैं। इस स्थिति में पानी में नर और मादा कई घंटों तक रहते हैं। यह दृश्य आपके कई विद्यार्थियों ने देखा होगा और इसके बारे में उनकी स्वभाविक जिज्ञास होगी।

इस क्रिया के दौरान मादा मेंढक के पिछले सिरे पर स्थित छिद्र में से एक-एक करके अंडे निकलते हैं। उसी समय नर के पिछले भाग में स्थित छिद्र में से द्रव के रूप में वीर्य निकलकर अंडों पर गिरता है। इस वीर्य में उपस्थित शुक्राणु अंडों की भित्ति को भेदकर उनका निषेचन करते हैं; अंडों के साथ निकला लसलसा पदार्थ निषेचन के बाद जेली के समान

गाढ़ा होकर उनकी सुरक्षा के लिये आवरण बना देता है। विद्यार्थी अंड-समूहों को इसी अवस्था में इकट्ठा करेंगे। इन अंडों के अन्दर जो रचना दिखती है वह मेंढक का भ्रूण है।

अंड म विकसित होता हुआ भ्रूण

चित्र २

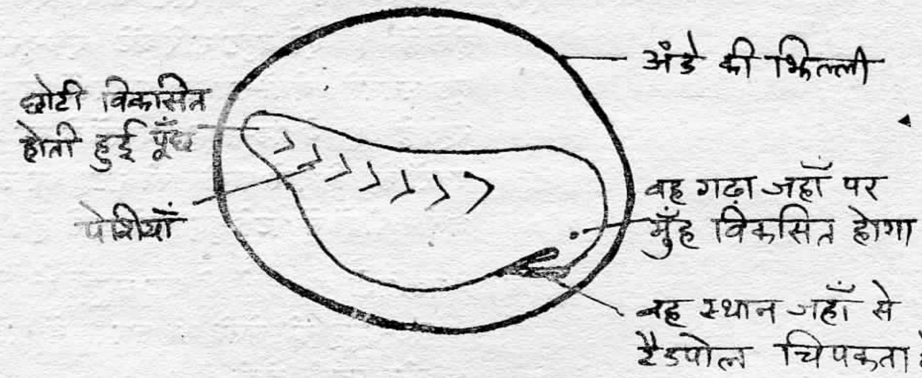

प्रश्न (३०) और (३१) के संदर्भ में

अंडों से जो टेडपोल बाहर निकलता है उसकी न तो आंखें होती हैं, न मुंह होता है और न ही टांगें होती हैं। उसकी पूंछ भी इतनी छोटी होती है कि उससे वह तैर नहीं सकता। अतः टैडपोल शुरू में आस-पास उगे हुए पौधों की पत्तियों की निचली सतह पर एक चिपचिपे पदार्थ की मदद से लटक जाता है

पौधे से लटके हुए टैडपोल

(चित्र-३)

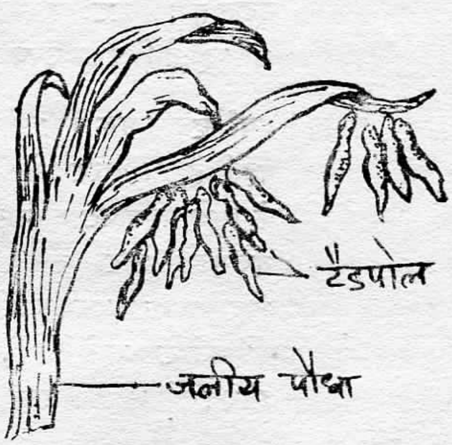

कुछ घंटों के बाद टैडपोल का मुंह विकसित होने लगता है, आंखें बनने लगती हैं और पूंछ भी लम्बी होने लगती है। साथ-साथ सांस लेने के लिये आंखों के पीछे रेशेनुमा बाहरी गलफड़े बनने लगते हैं। इस अवस्था में आने पर टैडपोल पत्तियों से अलग होकर भोजन की तलाश में तैरने लगता है। टैडपोल शाकाहारी होता है और काई खाता है।

उपर्युक्त जानकारी के संदर्भ में आप समझ गये होंगे कि टैडपोल को जीवित रखने के लिये यह आवश्यक है कि प्रयोग के बर्तन में कुछ जलीय पौधे या घास को सीधा खड़ा रखने की ऐसी व्यवस्था की जाये कि अंडे से निकलने के तुरन्त बाद टैडपोल को लटकने के लिये सहारा मिल सके।

एक आवश्यक सावधानी

यदि अंडों से निकलने के तुरन्त बाद भ्रूण पत्तियों पर न चिपकें और तैरते हुए दिखें तो शायद ये टैडपोल नहीं हैं, वरन् मछलियों के बच्चे हैं। इस बात की जांच करने के लिये प्रतिदिन एक भ्रूण को कांच की पट्टी पर रखकर उसका अवलोकन कीजिये और उसपर आंखों के पीछे रेशेनुमा बाहरी गलफड़े ढूंढ़िये। यदि ३-४ दिनों में भी आपको ये गलफड़े न दिखें तो इनके मछली होने की ही संभाविता अधिक है। इस स्थिति में इस प्रयोग के साथ-साथ विद्यार्थियों को फिर से अंड-समूह लाकर दुबारा प्रयोग शुरू करने के निर्देश दें।

गलफड़े

टैडपोल मछली के समान पानी में रहते हैं। अतः इनमें सांस लेने के लिये फेफड़ों के बजाय शरीर के बाहर व आंख के पीछे गलफड़े होते हैं (चित्र-४)। परन्तु कुछ दिनों के बाद ये बाहरी गलफड़े झड़ जाते हैं और नये आंतरिक गलफड़े बन जाते हैं जो एक ढक्कननुमा रचना से ढंके होने के कारण दिखाई नहीं पड़ते।

बाहरी गलफड़ों वाला टैडपोल

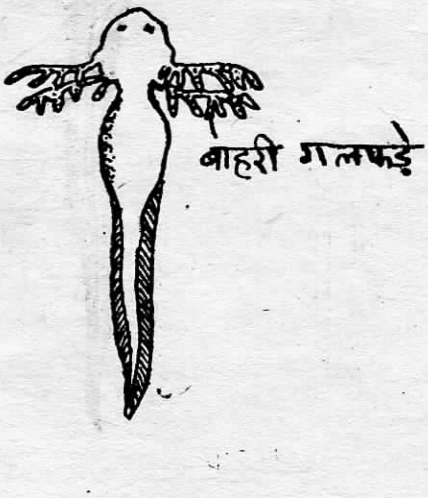

चित्र ४

यदि आप चाहें तो थोड़े बड़े टैडपोल को उंगलियों के बीच पकड़कर चिमटी से आंख के पीछे की ढक्कननुमा रचना को उठाकर विद्यार्थियों को आंतरिक गलफड़े दिखा सकते हैं। ये गलफड़े अपने लाल रंग के कारण आसानी से पहचाने जा सकेंगे। मछलियों में भी ऐसे ही गलफड़े होते हैं।

बाहरी और आंतरिक गलफड़ों में अनक पतली रक्त-नलिकायें होती हैं। पानी में घुली हुई आक्सीजन इन नलिकाओं के रक्त में मिल जाती है और रक्त की कार्बन डाइ-आक्साइड बाहर पानी में निकल जाती है। इस प्रकार गलफड़ों से श्वसन क्रिया होती रहती है।

प्रश्न (३४) के संदर्भ में

चित्र-५ में विकसित टैडपोल का निचली तरफ से दिखनेवाला एक नामांकित चित्र दिया गया है। इसकी सहायता से आप विद्यार्थियों को विकसित होते हुए टैडपोलों में विभिन्न अंगों की पहचान करा सकते हैं।

मिकसित टैडपोल (नचक्षो तरफ)

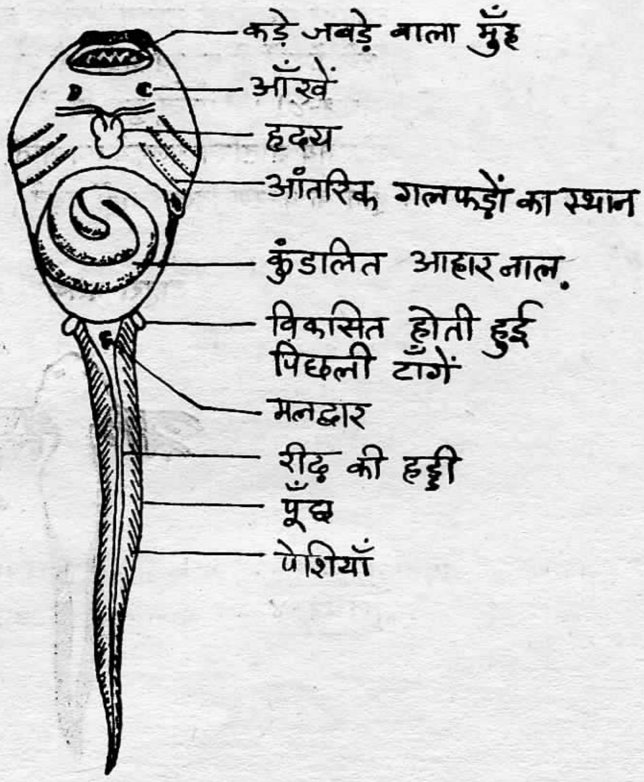

चित्र ५

कायान्तदण केदौरान प्रमुख परिवर्तन

टैडपोल सिर्फ पानी में ही रहता है और मेंढक पानी के अलावा जमीन पर भी रहता है। अतः कायान्तरण के दौरान टैडपोल में कई ऐसे परिवर्तन होते हैं जो उसे पानी और जमीन दोनों पर रहने योग्य बना देते हैं। इनमें से कुछ प्रमुख परिवर्तन निम्नलिखित हैं---

१. पूंछ धीरे-धीरे छोटी होकर गायब हो जाती है।

२. अगली और पिछली टांगें पूर्ण रूप से विकसित हो जाती हैं जो मेंढक के तैरने और जमीन पर छलांग लगाने के लिये उपयोगी हैं।

३. गलफड़े लुप्त हो जाते हैं और हवा में सांस लेने के लिये फेफड़े विकसित हो जाते हैं।

४. टैडपोल काई खाता है जिसे कुरेदने के लिये उसके मुंह पर एक कड़ी दंतीली रचना होती है। मेंढक जीभ से कीड़ों का शिकार करता है, अतः उसे इस दंतीली रचना की आवश्यकता नहीं होती। कायान्तरण के दौरान यह रचना लुप्त हो जाती है। मेंढक का सिर भी बड़ा हो जाता है और उसके तिकोने जबड़े भी अब विकसित हो जाते हैं।

५. कीटभक्षी होने के कारण मेंढक की आहारनाल भी छोटी हो जाती है। टैडपोल की घड़ी के स्प्रिंग के समान कुंडलाकार आंत मेंढक में दिखाई नहीं देती।

उपर्युक्त जानकारी आपको इस उद्देश्य से दी गई है कि इसके आधार पर आप विद्यार्थियों द्वारा उठाये प्रश्नों का उत्तर दे सकें। यदि आपकी कक्षा में संबंधित प्रश्न न उठे तो यह जानकारी विद्यार्थियों पर कदापि न थोपें।

कायान्तरण के परिवर्तनों की कुछ प्रमुख अवस्थाओं को चित्र-६ में दिखाया है। इनकी सहायता से विद्यार्थियों को अवलोकन करने में मदद दें

टैडपोल में कायान्तरण

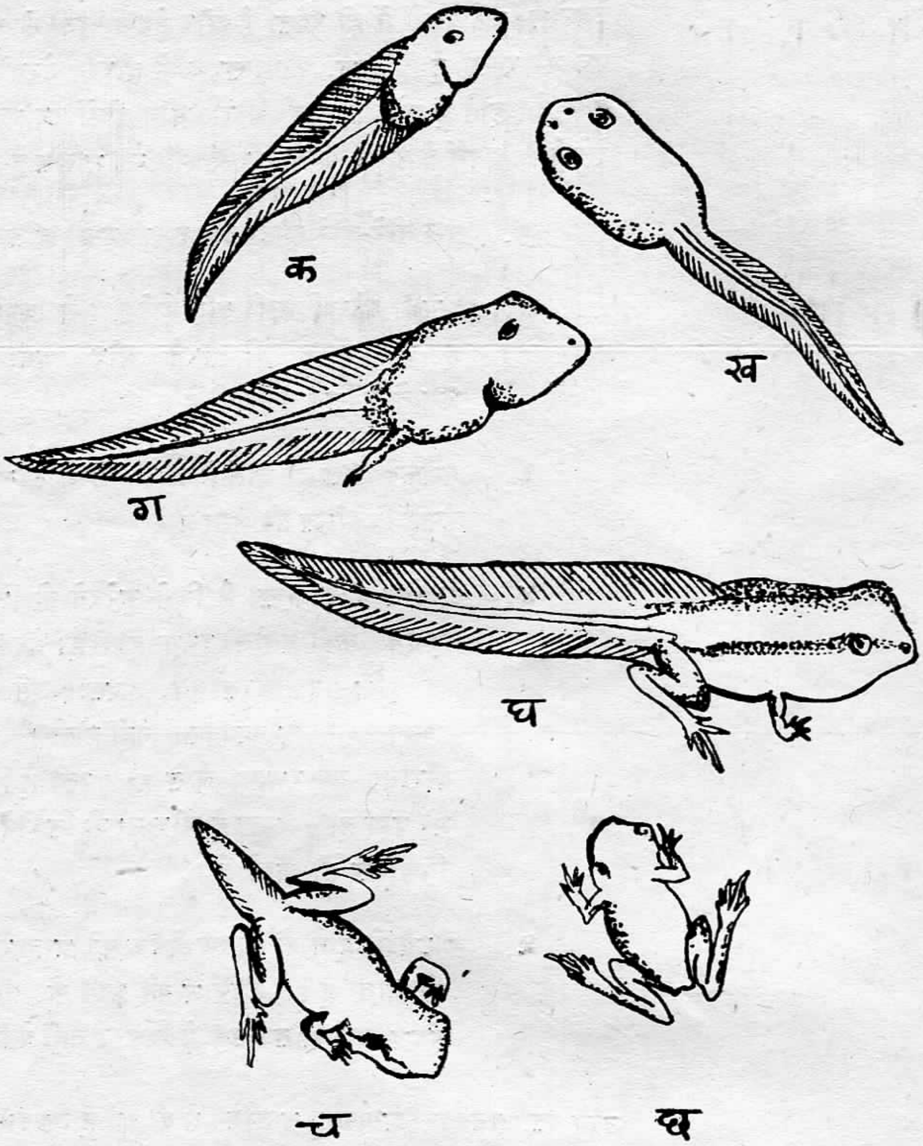

चित्र ६

टैडपोल क्यों कहते हैं ?

कई स्कूलों से यह सूचना मिली है कि अंडों से निकलने के ४-५ दिन बाद टैडपोल मर जाते है। बहुत कम स्कूलों में टैडपोल से मेंढक बन पाते हैं। टैडपोल मरने के निम्नलिखित कारण हो सकते हैं :

(क) प्रयोग के बर्तन में भोजन के लिये पर्याप्त काई न देना।

(ख) अंडों से निकलने के तुरन्त बाद टैडपोल को सहारे के लिये जलीय पौधों का न मिलना।

(ग) प्रयोग के दौरान डबरे के पानी के बजाये अन्य स्रोतों के पानी का उपयोग करना । यथासंभव उसी डबरे के पानी का उपयोग करें जहां से अंडे इकट्ठे किये गये थे।

(घ) कई बार प्रयोग के बर्तन के साइज की तुलना में टैडपोल की संख्या बहुत अधिक हो जाना ।

टैडपोल मर जाने पर

यदि उपरोक्त सावधानियां बरतने पर भी टैडपोल मर जायें तो स्थिति संभालने के लिये निम्नलिखित दो सुझाव हैं —

(क) डबरों से कुछ अलग-अलग अवस्थाओं के टैडपोल लाकर स्कूल में प्रयोग २ की विधि से रखे जायें।

(ख) डबरों से विभिन्न अवस्थाओं के टैडपोल लाकर उन्हें विद्यार्थियों के सामने प्रदर्शित किया जायें।

प्रयोग ३

इस प्रयोग में मच्छर के जीवनचक्र का अध्ययन उनके अंडों से क्यों नहीं शुरू किया जाता? मच्छर के अंडे इतने छोटे होते हैं कि उनको बिना अनुभव के देखना या ढूंढ़ना कठिन होता है। इसलिये मच्छर के जीवनचक्र का अध्ययन उसके लार्वा से शुरू किया गया है। इस बात से प्रश्न (४७) का भी उत्तर मिलता है।

कायान्तरण

यह आवश्यक नहीं है कि सभी जन्तुओं के जीवनचक्र में कायान्तरण हो। उदाहरणार्थ, कोसम के कीड़े, कपास के कीड़े, चूहे, गाय, मनुष्य आदि के जीवनचक्र में कायान्तरण नहीं होता । इन जन्तुओं में भ्रूण का विकास अंडे या मादा के गर्भाशय में होता है और जब बच्चे बाहर निकलते हैं तब वे वयस्क के समान ही दिखते हैं।

प्रमुख अवधारणाएं

१. जीव की उत्पत्ति जीव से ही होती है न कि अपने आप ।

२. जीव अपने समान ही संतान पैदा करते हैं।

३. विभिन्न जीव-जन्तुओं के जीवनचक्र में विविधता पाई जाती है।

४. कुछ जन्तुओं के जीवनचक्र में कायान्तरण होता है अन्य में नहीं।

शाकेमुभो—541—लोशिति—14-10-82—1000.